❋ श्रीसीता-जनकात्मजा ❋

लेखकः-मानस मर्मज्ञ प० श्रीसच्चिदानन्द दासजी रामायणी
महान्त-वरविश्राम बाग, मणिपर्वत-श्रीअयोध्याजी

न्यौछावर-१)५० पैसा

श्रीसीता जनकात्मजा स्तुति

जयति श्रीजानकी भानुकुलभानु की,
प्रानप्रिय-वल्लभे तरनि भूपे
राम-आनंद–चैतन्यघन-विग्रहा–शक्ति,
अह्लादिनी सारूपे ॥
चित्त चरण चिंतन जेहि धरत ही दूर-
हो काम भय कोह मद मोहमाया ।
रुद्र विधि विष्णु सुरसिद्ध-बदित पदे-
जयति सर्वेश्वरी रामजाया ॥
कर्म जग जोग विज्ञान वैराग्य लहि-
मोक्ष हित योगि जे प्रभु मनावैं ।
जयति बंदेहि सब-शक्ति-शिरभूषणे
ते न तव दृष्टि बिन कबहुं पावैं ।
कोटि ब्रह्माण्ड जगदीश को ईश जहि-
निगम मुनि बुद्धि ते अगम गावैं ।
विदितयह गाथ अहदान कुलमाथ सो-
नाथ तव दान लै हाथ आवैं ॥
दिव्य शतवर्ष जप ध्यान जब शिव धरयो-
राम गुरुरूप मिलि पथ बतायो ।
चितै हित लीन लखि कृपा कीनी तबै,

ॐ नमो भगवते राम भद्राय

श्रीसीता-जनकात्मजा

रचयिताः—

मानसमर्मज्ञ पं० श्रीसच्चिदानन्द दास रामायणी

महान्त-वर विश्रामबाग, श्रीराम ग्रन्थागार, मणिपर्वत

श्री अयोध्या जी

प्रकाशक ।

जानकीशरण (भूतपूर्व प्राध्यापक)

सोहावल-फैजाबाद

[गोकुल भवन अयोध्या के साकेतवासी परमहंस श्री राममङ्गल दासजी महाराज की अन्तःप्रेरणा से प्रकाशित]

प्रकाशक :
जानकी शरण (भूतपूर्व अध्यापक)
सोहावल (फैजाबाद)

प्रथम संस्करण
श्रीजानकी जयंती
श्रीराम सं० १,८१,९३,०८७
विक्रम सं० २०४४ वैशाख शुक्लानवमी
ई० सं० १६/१२/१९८७

न्यौछावर १-५० पैसा

मुद्रक :
वाल्मीकि प्रिंटिंग प्रेस
१२७/३, प्रमोदवन अयोध्याजी २२४१२३

श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः

श्री गुरुवे नमः

विश्ववन्द्य श्री सीताराम जी महाराज की कृपा से इस लघु ग्रन्थ का प्रकाशन हो रहा है। "श्रीसीता जनकात्मजा" को अवलोकन कर माननीय, वन्दनीय पूज्य चरण सन्तों ने कृपा पूर्वक अपनी सम्मति एवं आशीर्वाद देनेकी कृपा कीहै। नीचे आशीर्वादात्मक सम्मतियां वही दीजाती हैं जिससे सामान्य जनवर्ग एवं विद्वद्वर्ग प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार करके इस ग्रन्थ को अपनायें तथा आशीर्वाद देकर मुझे अनुगृहित करें।

भगवद् भागवद् चरणचंचरीक–

दासानुदासः

पं० सच्चिदानन्ददासः

॥ श्रीमते रामानन्दाय नमः ॥

अनन्त श्री विभूषित परमपूज्य परमादरणीय वैष्णवकुल भूषण महान्त श्री नृत्य गोपाल दासजी महाराज अध्यक्ष— श्रीमणिरामदास छावनी ट्रस्ट श्रीअयोध्याजी द्वारा आशीर्वचन एवं मंगल कामना

शुभ कामना

पराम्बा भगवती श्रीमैथिली की जन्म कथा का प्रचलन बहुत न्यून है। " भे प्रगट कृपाला .... ।" की भांति ही " भइ प्रकट कुमारी भूमि बिदारी " की परम्परा चल पड़ी है। श्री गोस्वामी तुलसीदासजी एवं पूर्ववर्ती कवियोंने भी इस गूढ़ विषयपर कम प्रकाश डाला है। सम्मान्य पं० श्री रामकुमार दासजी महाराज-मणिपर्वत अयोध्या के प्रिय शिष्य पं० श्री सच्चिदानन्द दासजी रामायणी का"श्रीसीता–जनकात्मजा"

विषयक प्रयास सराहनीय है । इस अन्वेषण से अन्य लेखकों को भी नयी दिशा मिलेगी । सत्प्रयास के लिए धन्यवाद

—नृत्य गोपाल दास
श्रीमणिराम छावनी–श्रीअयोध्याजी

• • •

श्रीः

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ श्रीवादिभीकरमहागुरवे नमः

श्रीधराचार्यः (शिव प्रसाद द्विवेदी)

(साहित्य–वेदान्ताचार्य एम० ए०; हिन्दी–संस्कृत)

मंगल कामना एवं आशीर्वचन-

श्री पं० सच्चिदानन्ददास प्रणीत 'श्रीसीता जनकात्मजा' गवेषणात्मक लघुपुस्तिका है । श्री सीता का जनकात्मजा होना— रामायणादि प्रख्यात् है किन्तु कभी—कभी निर्मूल दन्तकथाजन्य भ्रान्तियाँ, कृषिक्षेत्र में उत्पन्न अनपेक्षित तृण–समवाय के समान वस्तु याथात्म्य को भी आच्छन्न कर देती हैं । विवेचक लेखक अपने सत्प्रयास के माध्यम से चतुर कृषकों के समान शास्त्रार्थ सम्पदा की सुरक्षा किया करते हैं । श्री सीता पद का अन्वर्थ संज्ञात्व प्रतिपादन पुरस्सर, श्रीसीता जी के उद्‌भव विषयक अनेक भ्रान्त धारणाओं का अपनोदन इस पुस्तिका के माध्यम से हुआ है । लेखक के प्रत्याख्यान रहित

तर्कोपबृंहित स्वाभिमत अर्थ के प्रतिपादन के आलोक में अपसिद्धान्तों का उन्मूलन स्वभावतः हो गया है।

विश्वास है श्री पं० सच्चिदानन्द दास जी इसी प्रकार के विचारों का उपनिबन्धन करके सैद्धान्तिक मान्यताओं को और सुदृढ़ करते रहेंगे।

शिव प्रसाद द्विवेदी

०   ०   ●

● श्री रामो विजयतेतराम ●

अनन्त श्री युक्त महामान्यवर आचार्यप्रवर श्री हरिदास जी शास्त्री महाराज श्री हनुमान गढ़ी—अयोध्या द्वारा

आशीर्वचन

श्री श्रीजीकीकारुण्यामृतधारा के अजस्रप्रवाह से सारा संसार प्राणवन्त है। श्रीकिशोरीजी की विशेष कृपा पं० श्री सच्चिदानन्ददासजी पर है। अतः इस लघु कलेवर स्वरुप 'श्रीसीता जनकात्मजा' के ऐश्वर्यमय प्राकट्य का तात्विक विवेचन द्वारा अगणित उपासकों का कल्याण होगा। इसमें मानसमर्मज्ञ पं० श्रीसच्चिदानन्द दास जी का परिश्रम अत्यन्त श्लाघनीय है। इन्होने भक्तों के हृदयमें इसप्रकार अन्वेषणात्मक विवेचन करके अनुग्रह ही किया है। मेरी हार्दिक कामना है कि इसी प्रकार आगे भी आप ग्रन्थ-लेखन कार्य सम्पादन करते रहें। यह ग्रन्थ श्री श्रीं जी की कृपा का ही फल है।

आचार्य—हरिदास शास्त्री

हनुमानगढ़ी—अयोध्या

०   ०   ०

परम श्रद्धेय परमादरणीय श्री प्रमुदासजी महाराज प्राचार्य श्रीहनुमत संस्कृत महाविद्यालय-महान्त श्रीपलटूदास अखाड़ा, श्रीअयोध्याजी द्वारा

आशीर्वचनात्मक सम्मति :—

भारतीय दर्शनों में विशिष्टाद्वैत दर्शन का एक विशिष्ट स्थान है।

श्री रामचरित मानसमें इसका संकेत है। लेखक मानसमर्मज्ञ पं० श्री सच्चिदानन्द दास रामायणी जी ने स्थल-स्थल पर व्याकरण से विशिष्टाद्वैत दर्शन का समस्त स्वरूप यथेष्ट निरूपित करने का सफल प्रयत्न अपने लघुकलेवर—ग्रन्थ 'श्रीसीता जनकात्मजा' में किया है।

जनकात्मजा श्रीकिशोरीजीके प्राकट्य सम्बन्धमें अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ फैली हुई हैं। लेखक ने अपनी प्रतिभा तथा शास्त्रीय प्रमाणों से श्री किशोरी जी को जनकात्मजा सिद्ध किया है। तथा रक्तजा, भूमिजा, अग्निजा एवं रावणात्मजा आदि जैसी व्याप्त भ्रान्तियों को दूर करनेका सफल प्रयत्न कियाहै। मैं खुले हृदयसे इस प्रस्तुति से सन्तुष्ट हूं और मानस प्रेमी सज्जन विद्वान-पंडित तथा आलोचक भी अवश्य ही सन्तुष्ट होंगे —ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है। साथ ही इससे अनेकानेक भ्रान्तियां दूर होकर तथ्यात्मक अभिप्राय स्पष्ट होगा।

प्राचार्य—प्रभुदासः

श्रीहनुमत् संस्कृत महाविद्यालय-श्रीअयोध्याजी

० ० ०

अनंत श्रीविभूषित श्रद्धेय मानस मार्तण्ड श्रीप्रेमदासजी रामायणी महाराज महाविरक्त आश्रम- श्री अयोध्या जी द्वारा आशीर्वचनात्मक सम्मति-

"श्रीराम"

"श्रीसीता-जनकात्मजा" नामक लघु ग्रन्थ की रचना मानस मर्मज्ञ पं० श्री सच्चिदानन्द दासजी रामायणी के द्वारा हुई है। इस पुस्तिका में श्रीसीता-रामजी के उपासकों के लिये सारगर्भित उपदेश वर्णन है जो भक्तों एवं उपासकों के लिये मनन करने योग्य है। अतः इस पुस्तक से अवश्य पाठक-गण लाभ उठावें। मेरी मंगल कामना साथ है।

प्रेमदास रामयणी

महाविरक्त आश्रम—श्री अयोध्याजी

❁ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ❁

अनन्त श्रीविभूषित आचार्यप्रवर मानसतत्त्वान्वेषी, वेदान्तभूषण, डॉ० पं०
श्रीरामकुमार दासजी रामायणी महाराज का

※ आशीर्वचन ※

इस छोटे ग्रन्थ 'श्रीसीता-जनकात्मजा' का भाव एवं सिद्धान्त निर्देशन यद्यपि मेरा है, परन्तु इसमें प्रमाणों का अन्वेषण, लेख का बृहत् कलेवरकरण एवं अपनी शैली में प्रस्तुतीकरण करना मेरे प्रिय शिष्य पं० सच्चिदानन्द दास का है। मैं चाहता हूं कि इसी प्रकार पं० सच्चिदानन्द दास परिश्रम पूर्वक भगवद्भागवत चरित्र सम्बन्धी लेख एवं पुस्तकें लिखते रहें।

मेरा आशीर्वाद है कि इसी तरह आगे भी भगवद्भागवत चरित्र लेखन द्वारा विशिष्ट रूपेण भगवद्भजन करते रहें। भगवल्लीनुसंधान बहुत बड़ा भजन है, क्योंकि मैंने स्वयं इसका खूब अनुभव किया है। भगवच्चरित्र-चिन्तन, अनुशीलन एवं लेखन कालमें चित्त उतने समय तक सर्वथा एकाग्र रहता है।

इसके प्रकाशक श्री जानकीशरण जी भी मेरे प्रिय स्नेही हैं। उन्हें भी मेरा आशीर्वाद है कि इसी प्रकार वे सत्साहित्यों के प्रकाशन का सेवा-सौभाग्य प्राप्त करते हुए भगवद्भजन करते रहें। भगवद्-भागवत चरित्र सम्बन्धी सद्ग्रन्थों का प्रकाशन करना-कराना समग्र जनता एवं श्रीजनार्दन की प्रत्यक्ष सेवा है।

पं० रामकुमार दासः
श्रीरामग्रंथागार, मणिपर्वत
श्रीअयोध्याजी

ॐ नमो भगवते रामानन्दाचार्याय

श्रीगुरुवे नमः

निवेदन

सर्वैश्वर्य सम्पन्न अनन्त ब्रह्माण्डाधीश्वर करुणावरुणालय साकेत बिहारी सच्चिदानन्द परमपिता परमात्मा भगवान् श्रीरामजी की अकारण कृपासे अखिल विश्ववन्दिता जगज्जननी श्रीसीताजी के प्राकट्य महोत्सव पर यह 'श्रीसीता–जनकात्मजा' नामक लघु ग्रन्थ का प्रकाशन हो रहा है।

जब सम्पूर्ण संसार के स्वामी परब्रह्म अपने को दो स्वरूपों में अभिव्यक्त करते हैं तब पराम्बा भगवती श्रीसीताजी उनके वाम भाग में दिखाई पड़ती हैं। श्रीसीतारामजी एक ही तत्व हैं। लीला हेतु दो श्रीविग्रहों में दृष्टिगोचर होते हैं। अतः अखिल ब्रह्माण्डेश्वरी भगवती श्रीसीताजी श्रीरामजी से सर्वथा अभिन्न होते हुए भी भिन्न प्रतीत होती हैं। श्रीमद्गोस्वामी जी ने श्रीरामचरित मानस में अत्यन्त स्पष्ट रूपेण वर्णन किया है—

गिरा अर्थ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।
बन्दौं सीताराम पद, जिन्हहिं परम प्रिय खिन्न।

जगज्जननी श्रीजानकीजी के प्राकट्य सम्बन्धी सम्पूर्ण भाव वही है जो मैंने अपने परमादरणीय, परमपूज्य अनन्त श्रीविभूषित आचार्य-प्रवर वेदान्तभूषण मानस तत्वान्वेषी डा० पं० श्री रामकुमार दासजी महाराज श्रीगुरुदेव भगवान् से अध्ययन कालमें सुना है। और स्वयं श्री महाराज जी ने इसका निर्देशन किया है। मैं तो निमित्त मात्र हूं।

हृदयप्रेरक तो श्री गुरुदेव भगवान् ही हैं।

अतः श्रीगुरुदेव महाराज के कर कमलों में यह अत्यन्त लघु उपहार–पुष्प अर्पित है।

मेरा तो कुछ है नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपता क्या लागत है मोर॥

श्री जानकीशरण जी (भूतपूर्व प्राध्यापक) इस ग्रन्थ का प्रकाशन कर रहे हैं। ये मेरे स्नेही–स्वजन हैं, इसके पूर्व भी एक लघु पुस्तिका 'युगल चालीसा' का प्रकाशन कर चुके हैं। मङ्गल कारक श्री सीतारामजी सर्वदा इनके ऊपर सानुकूल कृपा करते रहें यही मेरी प्रभु से प्रार्थना है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः।

भगवद्भागवदानुचरः
पं॰सच्चिदानन्द दासः

ॐ नमो भगवते रामभद्राय

श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः

श्री गुरुवे नमः

श्रीसीता–जनकात्मजा

"नमः सुरार्चितां सदा समग्रविश्व पालिकां.
नमः सुलोचनात्मजां नमः विदेहबालिकाम् ।
नमः विदेहस्यात्मजां नमः सदाह्यनिन्दितां.
नमस्तुकुशलवाम्बिकां सदास्त्रिदेव वन्दिताम्॥"

(लेखकस्य)

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥

(रा० च० मानस)

अर्थः–मैं सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति, पालन एवं संहार करने वाली, समस्त क्लेशों, (दैहिक, दैविक और भौतिक); दुखों को नष्ट करने वाली, समग्र कल्याण करने वाली; समस्त संसार के एकमात्र स्वामी परमात्मा श्रीरामचन्द्रजी की प्राणवल्लभा–प्रिया श्रीसीताजी महारानी की वन्दना करता हूं।

यहाँ श्रीमद्गोस्वामीजी ने श्रीराघवेन्द्रप्रिया श्रीसीता जी की वन्दना करते समय षडैश्वर्ययुक्त छः विशेषण देकर यह संकेत किया है कि षडैश्वर्यसम्पन्न-श्रीभगवान् की

प्राणेश्वरी जगदम्बा भगवती श्रीसीता महारानी ही लीलाभेद से दो दिखाई देती हुई भी तत्वतः परात्पर प्रभु श्रीराम से अभिन्न हैं। एक ही ब्रह्म स्वयं दो स्वरूपों में दृष्टिगोचर होते हैं। 'एकं तत्व द्विधाभिन्नम्।' अर्थात् पूर्ण ब्रह्मतत्व एक ही है किन्तु लीला में दो हो जाता है। शिवसंहिता में भी आया है—

'एकं ब्रह्म द्विधागतम्'।

जहाँ श्रुतियाँ केवल ब्रह्म का ही परत्व गान करती हैं, वहाँ श्रीतत्व को भी ब्रह्मतत्व में ही अन्तर्भूत मानना चाहिये। इस सम्बन्ध में श्रीगुणरत्नकोश में स्पष्ट वर्णन है—

'तदन्तर्भावात्त्वां न पृथगभिधत्ते श्रुतिरपि।'

तात्पर्य श्रुतियों ने स्थान-स्थान पर श्री जी का भगवत्तत्व में अन्तर्भाव कर लेने से ही उन स्थलों पर उनका पृथक् वर्णन नहीं किया है। श्रीसीताराम का दोनों स्वरूप नित्य है तत्वतः दोनों एक ही तत्व हैं। श्रीराममंत्र में श्री सीताजी तथा श्रीसीतामंत्र में श्रीरामजी नित्य स्थित हैं। यथा—

"द्वौ च नित्यं द्विधा रूपं तत्वतो नित्यमेकता।
राममन्त्रेऽस्थिता सीता सीतामन्त्रे रघूत्तमः॥"

(श्रीनारदपाञ्चरात्र)

आइये सर्वप्रथम 'श्रीसीता' शब्द पर विचार करें

व्याकरण की दृष्टि से 'सीता' शब्द के कई अर्थ होते हैं। यथा—

(१) 'सूयते'(चराचर जगत इति सीता—अर्थात् जो संपूर्ण जगत को उत्पन्न करती हैं वह सीता हैं। इस अर्थ में "षूङ् प्राणि प्रसवे" धातु से बनता है। इससे 'उद्भवकारिणीम्' श्री सीताजी के लिये विशेषण दिया गया है।

(२) 'षु प्रसवैश्वर्ययो' धातु से निष्पन्न 'सीता' शब्द का अर्थ— 'सवति इति सीता' अर्थात् जो ऐश्वर्ययुक्त है उसे सीता कहते हैं। इसी से गोस्वामीजी ने 'स्थितिकारिणीम्' कहा है। तात्पर्य ये सृष्टि का रक्षण—पालन करती हैं। क्योंकि जो ऐश्वर्य सम्पन्न है वही पालन-पोषण एवं संर-क्षण-कार्य सम्पन्न कर सकता है।

(३) 'स्यति इति सीता' अर्थात् जो संहार करतीं हैं या भक्तों के क्लेशों को हर लेती हैं। यह सीता शब्द 'षोऽन्त कर्मणि' धातु से बनता है। इसमें 'संहारकारिणीम्' एवं 'क्लेशहारिणीम्' दोनों का भाव है।

[४] 'सुवति इति सीता' अर्थात् भक्तों को सद्बुद्धि की प्रेरणा देकर कल्याण करने वाली होने से 'सीता' नाम प्रसिद्ध है। यह सीता शब्द 'षू प्रेरणे' धातु से सिद्ध होता है। इसमें 'सर्वश्रेयस्करीम्' विशेषण का भाव है।

[५] 'सिनोति इति सीता' अर्थात् अपने परम दिव्य गुणों

से परात्पर ब्रह्म श्रीरामजी को बांधने (बश करने) वाली सीता कही जाती हैं। इस अर्थ में 'षिञ् बन्धने' धातु से सीता शब्द बनता है। इससे 'रामबल्लभाम्' कहा गया है। इसी प्रकार 'सीता' शब्द कई धातुओं से कई अर्थों में प्रयुक्त होता है।

पूज्यचरण श्रीतुलसीदासजी ने श्रीरामजी से पूर्व श्री जी की वन्दना की है, क्योंकि समग्र शास्त्रीय सिद्धान्त है– परमात्मा के विषय में पूर्णतया ज्ञान श्रीकिशोरीजी की कृपा से ही सम्भव है। जीव तभी भगवत्कृपा का अधिकारी होता है जब वह पूर्ण समर्पण करके भगवत्शरणागति स्वीकार करता है। परन्तु उन करुणावरुणालय कृपासागर कारण रहित कृपालु के समक्ष यह अनाद्यनन्त पापराशियों से परिपूर्ण जीवात्मा किस प्रकार पहुंचे। यद्यपि परमात्मा मोक्षप्रद है, फिर भी मोक्षप्रदान में मुख्यकर्तृत्व श्रीभगवान् का होने पर भी उसमें श्रीसीताजी का प्रयोजक रूप से अन्तर्भूत हैं। भगवच्छरणागति में श्री जी का पुरुषकारत्व अवश्य आपेक्षितहै। पुरुषकारत्व के हेतु जो तीन गुण मुख्यतः अपेक्षित हैं— कृपा, पारतन्त्र्य और अनन्यार्हत्व–ये गुण श्रीकिशोरीजी में पूर्णतः विद्यमान हैं। विषयपरायण– मायामुग्ध जीवों को अनन्त क्लेश सहन करते हुए देखकर उन्हें श्रीरामजी से साक्षात्कार कराने एवं मिला देने का

प्रयत्न करने के लिए 'कृपा' नामक गुण की जरूरत होती है। परमात्मा श्रीराम को वश करने के समय अनुवर्तन की आवश्यकता होने से पारतन्त्र्य भी अपेक्षित है। पुनः यह तीसरा गुण– मुझे छोड़कर यह किसी को नहीं चाहतीं, मैं ही इनको अत्यन्त प्रिय हूं अतः यह जो कहेंगी वह मेरा ही कार्य कहेंगी। अतः इनका कहना मुझे अवश्य मानना चाहिये–जबतक ये गुण पुरुषकार में न होंगे, तब तक वह प्रभुसे जीव के लिये कैसे हठ कर सकेगा–और ये उपर्युक्त सारे गुण जगज्जननी श्रीजानकीजी में अवस्थित हैं। अतः अनन्तकाल से भगवच्चरण विमुख जीव को प्रभु के श्री चरणारविन्द में पहुंचाने का कार्य श्री जी ही विशेषरूपेण करती हैं।

आइये इन्हीं पराम्बा जनकात्मजा श्रीजानकीजी के जन्मोत्सव के परमपुनीत सुअवसर पर उनकी प्राकट्यलीला पर कुछ विचार करें–जिस प्रकार परब्रह्म परमात्मा श्रीराम का नाम चिन्मय है नित्य है अनादि है। रघुकुल में अव–तरित होने के पूर्व भी श्रीराम नाम की महिमा प्रसिद्ध हैं। यह सर्वविदित है कि श्रीप्रह्लादजी सत्ययुग में भी श्रीराम नाम जपते थे। यथा– (चित्त सम्बोधनम् भक्ति प्रकरणे)

'रामनाम जपतां कुतोभयं सर्वताप शमनैक भेषजम्।
पश्य तात ममगात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना॥

पुनश्च-तातैव वह्निः पवनेरितेऽपि,न मां दहत्यत्र समन्ततोऽयम्
पश्यामि पद्मास्तरणास्तृतानि,शीतानि सर्वाणि दिशाम्मुखानि
(विष्णु० पु० १/१०/४७)

श्रीरामनाम के प्रभाव से असुरराज के सारे प्रयत्न निष्फल हो गये, पर परमभागवत श्रीराम-नाम जापक श्री प्रह्लाद जी का बाल भी बाँका नहीं हुआ। कदाचित कोई कहे कि त्रेता में प्रभु श्रीरामका प्राकट्य हुआ और करोड़ों वर्ष पूर्व सत्ययुगमें उनका श्रीरामनाम जपना कैसे संगतहै? इस पर श्रीमद्भागवत में सप्तद्वीपवती-भूमि-सम्राट् भक्तप्रवर राजर्षि अम्बरीषजी द्वारा कृष्ण-पादारविन्द में अपना मन लगाये रखना वर्णन हैं। वह देखना चाहिये–

"स वै मनः कृष्णपदारविन्दयोर्वचांसिवैकुण्ठगुणानुवर्णने।'
(भाग० ९/४/१८)

कहने का तात्पर्य भगवान के सभी नाम अनादि हैं। अतः वे ही साकेताधीश्वर परब्रह्म श्रीराम जब भूतल पर दशरथजी के औरस पुत्र रूप में प्रकट हुए तो श्री सम्प्रदाय के तृतीयाचार्य ब्रह्मर्षिवर वशिष्ठजी ने उनका वही नाम रखा–

"कौशल्या जनयद्रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्।"
(बा० रा० १।१८।१०)

पुनश्च–अतीत्यैकादशाहं तु नाम कर्म तथाकरोत्।
ज्येष्ठं राम– –। (बा० रा० १।१८।२१)

ठीक इसी प्रकार श्रीराम नाम के समान ही श्री सीता नाम भी अनादि है। मनुशतरूपाजी को युगल स्वरूप सीतारामजी ने साथ ही साथ दर्शन दिया था।

'भृकुटि विलास जासु जग होई। राम बाम दिशि सीता सोई।।
(मानस)

श्रीरामवल्लभा श्रीजी नित्य हैं। ये सर्वदा अपने प्राणेश रामजी के परमदिव्यधाम साकेत स्थित भोग-अयोध्या में निवास करती हैं। जब प्रियतम प्रभु श्रीराम भक्तजन रक्षणार्थ त्रिपाद् विभूतिसे इस मायाराज्य–एक,पाद्विभूति स्थित लीला-भूमि अयोध्याजी में अवतरित होते हैं तो श्री किशोरी जी भी लीलाभूमि-मायापुरी मिथिलाजी में अपने को जनकात्मजा के रूपमें प्रकट करतीहैं। यह स्मरणीयहैकि सप्तपुरियों में मायापुरी मिथिलाजी को ही कहा जाताहै। क्योंकि मानस में संकेत है—

आदिशक्ति जिहि जग उपजाया। सो अवतरिहिं मोरि यह माया।

यहाँ माया का तात्पर्य "मायादम्भे कृपायाञ्च" के अनुसार भगवत्कृपा स्वरूपिणी श्रीरामवल्लभा श्रीजी से ही है। माया-सीताजी जिस पुरी में अवतीर्ण हों उसे मायापुरी कहा गया है। जैसे श्रीरामजी के प्रगट होने वाले पुर का नाम रामपुर है। यथा—पहुँचे दूत रामपुर पावन।।

सुविख्यात् सन्तप्रवर श्रीप्रेमलताजी ने 'सीताराम–रहस्यदर्पण' नामक ग्रन्थ में एक पद्य में स्पष्ट लिखा है—

"मिथिला-मायापुरी परमशुचि, महिमा कही न जाती है।
श्री सियाराम–विहारथली, नित नव आनन्द बहाती है॥
जन्मभूमि श्रीसियस्वामिनि की, जान अघ ओघ नशाती है।
'प्रेमलता', हतभाग्य जीव ते, जिन्हें न मिथिला भाती है॥"

यद्यपि नित्य, अनादि-दम्पति भगवान् श्रीसीताराम जी का तत्वतः कोई जन्मदाता माता-पिता नहीं हैं, परन्तु भक्तवांछा कल्पतरु प्रभु किन्हीं परम भाग्यशाली, विशिष्ट-सिद्धजीव को अपना माता-पिता स्वीकार कर लेते हैं।

इस श्वेतवाराहकल्प के प्रथम मन्वन्तराधीश महाराज श्रीस्वायम्भुव मनु ने अपनी रानी श्रीशतरूपाजी के साथ अट्ठाईस हजार वर्षों तक परब्रह्म परमात्मा श्रीरामजी की आराधना की थी। उसी समय एक अयोध्या निवासी विप्र दम्पति श्रीहरिदेवजी भी अपनी प्रिय पत्नी कनकलताजी के साथ नैमिषारण्य में ही रहकर परब्रह्म श्रीरामजी की आराधना करते थे। जब भगवान् श्रीसाकेतनाथ-श्रीरामजी और श्रीसीताजी ने श्रीमनु दम्पति को दर्शन देकर कृतार्थ किया और उनकी प्रार्थना से उनको पुत्र एवं पुत्रवधू बनने का वर प्रदान कर दिया। तत्पश्चात् विप्रदम्पति के पास वर देने प्रभु पधारे। अभिवादनोपरान्त जब युगल सरकार ने वर मांगने के लिये कहा तथा बुद्धिसम्पन्न द्विजवर श्री

हरिदेवजी ने विचार किया कि श्रीमनु महाराज ने केवल प्रभु को जब पुत्र रूप में याचना की तब फलस्वरूप श्रीभगवान् ने अपनी आद्याशक्ति वामभागस्थिता श्रीसीता जी के भी अवतरण का संकेत किया—

आदिशक्ति जिहि जग उपजाया ।सो अवतरिहिं मोरि यह माया

इस भगवद्वाक्यानुसार श्रीजगज्जननी का भी प्राकट्य कहीं न कहीं होगा ही, अतः क्यों न मैं ही उस संकेत का लाभ उठा लूँ । परमशक्ति भगवती श्रीसीताजी मेरी पुत्री बन जायेंगी तो उनकी कृपा से प्रभु का भी सानिध्यसुख मुझे प्राप्त हो जायेगा । और वे पुत्र स्वरूप जामाता बन कर मुझे कृतार्थ कर देंगे,यह शोचकर श्रीहरिदेवजी ने स्पष्ट रूपेण श्रीभगवान् से श्रीसीताजी को पुत्री एवं उन्हें अपना जामाता होने का वर माँग किया ।

प्रसिद्ध ग्रन्थ श्रीविश्रामसागर के रचयिता सन्तप्रवर बाबा श्रीरघुनाथदास 'रामस्नेही' जी ने इतिहासायन खड में यह कथा लिखी है—

तहाँ विप्र हरिदेव प्रवीना । कनकलता युत नारि नवीना ।।
करहिं तपस्या भगवत हेता । असन बसन तजि अवधनिकेता ।।

० ० ० ०

अस कहि पुनि प्रभु द्विज पहि आये। माँगु-माँगु वर वचन सुनाये
नारि समेत विप्र अस भाषा । देहु नाथ वर यह अभिलाषा।।

इन समान कन्या मिलै, तुम समान जामात ।
यह वर दीजै करि कृपा,और न चाहिय तात॥

एवमस्तु कहि कृपा निधाना। बोलत भे सुनु विप्र सुजाना॥
त्रेता जनक होव तुम सोई। नाम सुनैना इनकर होई॥
तब तुव तनया शक्ति हमारी। होइहैं अंशन संयुत चारी॥
मैं जामात मिलब तहँ आना। अस कहि प्रभु भे अन्तर्धाना॥

० ० ० ०

यह इतिहास जौन मैं कही। लोमश रामायण महँ सही॥

इसके अनुसार सातवें वैवस्वतमनवन्तर के चौबीसवें त्रेतामें वही श्रीहरिदेव-कनलता राजर्षि श्रीजनक-सुनैना के रूपमें जन्म लिये।तब परामबा-जगदम्बा-भगवती श्रीसीताजी ने माता सुनैनाजी से अपनेको प्रकटकिया।विदेहराज श्रीजनक की औरस सुता होनेसे श्रीजनकात्मजा नामसे प्रसिद्ध हुईं।

समाज में अधिकांशत: यह भ्रमपूर्ण धारणा हो गयीहै कि श्रीसीताजी महरानी सुनैना की सगी सुता नहीं हैं—वे तो भूमिजा हैं। यहाँ तक रक्तजा, पद्मजा, दशरथात्मजा, एवं रावणात्मजा कहने में भी कुछ अविज्ञ लोग संकोच नहीं करते। ऐसा प्रवाद है कि महारानी सुनैना ने मात्र लालन-पालन किया था। किन्तु वास्तविक तथ्यात्मक बात यह है कि श्रीरामवल्लभा श्रीसीताजी राजर्षि श्रीसीरध्वज-श्रीसुनैना की स्वजात सुता हैं। इस सम्बन्ध में कुछ बातें

द्रष्टव्य हैं—

समाज में कुछ लौकिक परम्परायें होती हैं जो दीर्घ काल तक ज्यों का त्यों चला करती हैं। उसमें एक ऐसी ही लोक-परम्परा मिथिला क्षेत्र में कहीं-कहीं लोक-प्रथानुसार चलती है कि नवीन वर्षारम्भ में विशेष योग पड़ने पर नगर के राजा-जमीन्दार या विशिष्ट नगर स्वामी की ओर से विद्वान् ज्योतिषीं-पंडितों द्वारा एक विशिष्ट प्रकार से भूमि का परिशोधन चुनाव होता है। पूरे नगर-गाँव या कस्बे, राज्य के अन्तर्गत पृथ्वीदेवी की वैदिक पूजा करने के लिये एक क्षेत्र-खण्ड (खेत) को चुना जाता है। कदाचित वह भूमि (खेत) किसी रैयत-किसान के अधिकार में पड़ती हो तो निश्चित शुल्क देकर पूरे एक वर्ष के लिए क्रय कर लिया जाता है। तब राजा या जमींदार स्वयं उस चुनी हुई भूमि की पूजा करके जुताई-बुवाई का श्रीगणेश करेगा। तथा वर्षान्त में पुनः उसके असली रैयत को वह जमीन लौटा देता है।

ठीक यही क्रम (लौकिक परम्परानुसार) क्षेत्र-परिशोधन-कार्य राजर्षि श्रीजनकजी के काल में भी चलता था। संयोगवश उस प्राचीनकाल में नववर्षारम्भ का क्षेत्र परि–शोधन-समय वैशाख शुक्ल नवमी को पड़ा करता था। भगवत्प्रेरणा से वही भूमि परिशोधन हेतु हल चलाने

एवं बीज-वपन करने की क्रिया सम्पन्न की जा रही थी। महाराज श्रीसीरध्वज जब सुवर्णमय हल में जुते बैलों को हांकने लगे तो पीछे से हल के फाल से उभरी रेखामें बीज गिराने का कार्य स्वयं राजरानी श्रीसुनैनाजी करने लगीं। संयोगवश उन दिनों श्री राजेश्वरी जी गर्भवती थीं और उनके गर्भ के दिन पूरे हो चुके थे।

किन्तु साक्षात् अखिल भुवनेश्वरी भगवती श्रीसीता जी का दिव्य श्रीविग्रह तेज स्वरूप उनके उदर में पल रहा था अतः प्रसववेदना का कोई आभास भी नहीं था। अचानक जगज्जननी सर्वेश्वरी श्रीसीताजी का प्रकट होने का काल आया–पाँचवे बार बैलों के घूमते–घूमते श्री जनक–महिषी भूतल पर जुते खेत में ही बैठ गयीं। महरानी को श्रमितावस्था में देखकर महाराज के संकेतानुसार तत्काल वहीं वस्त्रों से पर्दा कर दिया गया और हल के अग्रभाग फाल–सीत से बनी गहरी रेखा युक्त भूमि पर ही श्रीसीता जी का प्राकट्य हुआ। आकाश से सुरों ने प्रचुर रूपेण सुगंधित सुमनों की वर्षा की। जगज्जनी श्रीजनकात्मजा की जय,सर्वेश्वरी श्रीसीताजी की जय,भूमिजा सुनेना नंदिनी की जय, सर्वत्र जय घोष से त्रैलोक गूँज उठा। मांगलिक वाद्य वादन एवं आरती से सम्पूर्ण आकाश आलोकित हो गया। सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य छा गया।

इस प्रकार श्रीकिशोरीजी सीरध्वज-सुनैना की अपनी सगी पुत्री हैं। श्रीविदेहराज जनकजी की औरस-आत्मजा तनया होने से, जनकजा, जानकी, जानकपुत्री, जनककिशोरी, जानकनन्दिनी तथा जनकात्मजा आदि नाम ख्यात हुए। हल की फाल-सीत से जुती हुई रेखा में प्रसूत होने से श्री साकेतबिहारी श्रीरामजी की प्राणवल्लभा श्रीसीताजी का मूल नाम श्रीदेवर्षि आदि ऋषियों ने बताया। खुली धरती पर प्रकट होने से धरासुता धरणिजा, भूमिजा, महिजा आदि कई नाम भी लोक में प्रसिद्ध हो गये।

इस सम्बन्ध में एक कथा भी आती है—एकबार पृथ्वी की अधिष्ठात्री देवी ने श्रीजी की चिरकाल तक आराधना की थी। जब भगवती श्रीसीताजी प्रसन्न होकर प्रकट हुईं तो उन्हें कन्या रत्न-रूपमें प्राप्ति का वर प्राप्तकर श्रीधरा-देवी कृतार्थ हो गयीं। तदनुसार जब श्रीजी की माता सुनैना देवी का जन्म हुआ तो स्वयं भूमि देवी उन्हीं में प्रविष्ट हो गयीं। यही कारणहै कि श्रीकिशोरीजी पृथ्वी के सभी पर्यायवाची नामों के साथ जुड़कर पुत्री रूपमें भी प्रसिद्ध हुईं।

शास्त्रों में चार प्रकार की सन्तानों का उल्लेख मिलता है। १—औरस—स्वस्त्रीमें बीर्याधान द्वारा जो सन्तान उत्पन्न होती है उसे औरस या आत्मज संज्ञा दी जाती है।

२— क्षेत्रज्ञ—दूसरे के पत्नी में दूसरे पुरुष द्वारा गर्भाधान—

(नियोगविधि) द्वारा उत्पन्न सन्तान गर्भाधानकर्ताकी आत्मज औरस तथा पत्नी वाले की क्षेत्रज-सन्तान मानी जाती है। ३-दत्तक-किसी से विधान पूर्वक गोद ली हुई सन्तान दत्तक संज्ञा से जानी जाती है। ४-क्रीत या पोष्य-जिसे खरीदा गया हो अथवा जिसे किसी अनाथालय या कहीं अन्यत्र आश्रयहीन रूपमें प्राप्त किया गया हो, ऐसी सन्तानों को क्रीत एवं पोष्य संज्ञा दी जाती है। इन चारों में श्रेष्ठ संतान मात्र आत्मज-औरस ही मानी जाती है। क्रमशः इससे तीनों न्यून समझना चाहिये। औरस एवं क्षेत्रज सन्तान के उद्धरण में श्रीहनुमानजी का नाम आता है। इन्हें पवनात्मज तो कहा जाता है, किन्तु केशर्यात्मज कहीं भी नहीं कहा जाता है। हनुमानजी श्रीअंजनी देवी से उत्पन्न श्रीपवनदेव के औरस-आत्मज पुत्र हैं, और केशरी की पत्नी श्रीअंजनी के गर्भ से उत्पन्न होने से श्रीकेशरी के क्षेत्रज पुत्र माने जाते हैं। प्रसिद्ध ग्रन्थ श्रीहनुमान चालीसा में आया है-

"शंकर स्वयं केशरी नन्दन, तेज प्रताप महा जगवन्दन ।।
रामदूत अतुलित बल धामा, अंजनि पुत्र पवनसुत नामा ।।"

अतः स्ववीर्य से उत्पन्न सन्तान ही आत्मज एवं औरस कहला सकती है क्षेत्रज, दत्तक एवं क्रीत या पोष्य सन्तानें नहीं। श्रीमिथिलेश नन्दिनी श्रीसीताजी को सर्वत्र जनकात्मजा कहा गया है अतः वे महाराज श्रीसीरध्वज की स्व-

वीर्यजात पुत्रीहैं। यह भी स्वाभाविक बातहै जो ममता एवं स्नेह अपने स्वजात सुता या सुत में उमड़ सकता है वह दत्तक, क्रीत या पोष्य में नहीं।

इस पर कदाचित यह कोई कहे कि श्रीजनकनन्दिनी जनकसुता आदि नाम तो प्रायः मिलते हैं किन्तु सुनैना नन्दिनी सुनैना सुता आदि नाम तो प्रायः नहीं ही मिलते। अतः श्रीसीताजी सुनैना देवी की स्वसुता नहीं कही जा सकती हैं।

इस सम्बन्ध में तथ्यात्मक कुछ बातें विचारणीय हैं- किसी भी सन्तान का विशेष लगाव प्रायः माता से ही रहा करता है, अतः श्रीकिशोरीजी के लिये सुनैनात्मजा या सुनैना कुमारी आदि नामों का प्रयोग नहीं मिलना, प्रचलित भ्रमपूर्ण धारणा की पुष्टि करता है। किन्तु पुराणों के अवलोकन से ऐसी प्राचीन प्रथा देखने में आती है कि जिनके माता-पिता दोनों समान रूप से समाज में ख्यात् नहीं होते थे उनकी सन्तानें अपने नाम के अतिरिक्त प्रसिद्ध पिता या प्रसिद्ध माता के नाम से सम्बद्ध होकर जानी जाती थीं। उदाहरणार्थ इक्ष्वाकु, सगर, ककुत्स्थ, रघु, भरत और यदु आदि अकेले ख्यात् थे, इनकी पत्नियाँ लोक ख्यात् नहीं थीं अतः इनकी सन्तानें ऐक्ष्वाकु, सगर, काकुत्स्थ, राघव, भारत, और यादव आदि क्रमशः कहलायीं। और इसके विपरीत

मदालसा जितनी प्रसिद्ध थीं उतना उनके पति ऋतुध्वज प्रसिद्ध नहीं थे अतः उनके पुत्र अलर्कादि मातृनाम से सम्बद्ध हो प्रसिद्ध हुए। जिनके माता-पिता दोनों समान रूप से लोक विख्यात थे, उनकी सन्तानें माता-पिता दोनों से सम्बद्ध नामों से जानी गयीं। यथा– नन्द यशोदा, वसुदेव देवकी, रोहिणी. दशरथ कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा आदि दम्प-तियों के अंगज दोनों से प्रसिद्ध हुए।

ठीक इसी प्रकार राजर्षि श्रीजनकजी जितने लोक विख्यात् थे उतना उनकी पत्नी श्रीसुनैना देवी ख्यात् नहीं थीं। अतः शास्त्रों में सर्वत्र जनकसुता, जनकात्मजा, जनक-पुत्री, जानकी आदि नाम ही आये हैं। महारानी सुनैना से सम्बद्ध नाम यदा-कदा कहीं-कहीं आये हैं।

यह भी स्मरणीय है कि श्रीजानककिशोरी की उत्पत्ति श्री मिथिला के राजमहल में स्वर्णपर्यंक पर न होकर भूमि संशोधन करते समय खुली धरती पर हुईथी। अतः भूमिजा, भूमिनन्दिनी आदि नाम भूतल पर विशेष ख्यात् हो गये।

श्रीभगवान् का प्राकटय-जन्म-अवतरण देखने में तो सामान्य जीवधारी प्राणियों की ही भाँति होता है। किन्तु तत्वज्ञ जन तो जानते हैं कि प्रभु का प्राकटय एवं उनके जन्म गुण-कर्मादि (लीलायें) सभी परम दिव्य हैं। यथा–
'जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्वतः।' [भगवद्गीता]

अर्थात् जो मेरे दिव्य जन्म एवं दिव्य कर्मों को तत्वतः जान लेते हैं—

इस भगवद्वाक्य के बाद भी कुछ भावुक हृदयी भक्त-जन श्रीभगवान् को गर्भमें आना सुनकर अत्यन्त दुखित हो जाते हैं। वे कहने लगते हैं कि जब ब्रह्म-परमात्मा या स्वयं श्रीभगवान् भी जीवों की भाँति गर्भमें प्रवेश करतेहैं, ऐसा मान लिया जाय तो ब्रह्ममें और जीवमें भेद ही क्या रहेगा?

किन्तु इसपर गहराई से विचार करना चाहिये कि ब्रह्म सामान्य जीवों की भाँति गर्भ में नहीं आता या रहता। क्योंकि गर्भ में आने पर भी ब्रह्म को गर्भजनित तनिक भी कष्ट नहीं होता। यहाँ तक कि सामान्य जीवों को गर्भ-धारण करने बाली स्त्रियों को जो गर्भधारणजनित व्यथा तथा प्रसव-पीड़ा आदि होती है उसका आभास भी ब्रह्मको उत्पन्न करने वाली माताओं को नहीं होता। उदाहरणार्थ स्वयं परात्पर ब्रह्म-प्रभु श्रीराम आदि चारों भ्राताओं को गर्भ में आना वर्णन है।

'यहि विधि गर्भ सहित सबनारी। भईं हृदय हर्षित सुखभारी'
'जा दिनते हरि गर्भहि आये। सकल लोक सुख संपति छाये'

(श्रीरामचरित मानस)

हुताशनादित्य समान तेजसोऽचिरेणगर्भान् प्रतिपेदिरे तदा।
ततस्तु राजा प्रतिवीक्ष्य ताः स्त्रियः प्ररूढ़गर्भाः प्रतिलब्ध मानसः

(वा० रा० १।,६।३१-३२)

अर्थात् उन महारानियों के गर्भ अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी थे। इस प्रकार अपनी रानियों को गर्भवती देखकर महाराज श्रीदशरथजी अत्यन्त प्रसन्न हुए।

आगे चलकर स्पष्ट वर्णन है कि महारानी श्रीकौशिल्या देवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त श्रीराम को जन्म दिया। यथा—

"कौशल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम् ।"

(बा० रा० ०७/२७/७)

पुराण शिरोमणि श्रीमद्भागवत में वर्णन आया है कि भगवान् श्रीहरि ने श्रीवसुदेवजी के मनमें प्रथम अपने को आधान किया और श्रीवसुदेवजी का अंग-संग प्राप्त करके श्रीदेवकीजी गर्भवती हुई। यथा—

भगवानपि विश्वात्मा भक्तानामभयंकरः ।
आविवेशांशभागेन मन आनकदुंदुभेः ॥१६॥
स विश्रुतपौरुषं धाम भ्राजमानं यथा रविः ।
दुरासदोऽतिदुर्धर्षो भूतानां सम्बभूव ह ॥१७॥
ततो जगन्मङ्गलमच्युतांशं समाहितं शूरसुतेन देवी ।
दधार सर्वात्मकमात्मभूतं काष्ठाऽऽनन्दकरं मनस्तः ॥१८॥

(भाग० १०/२/१६-१८)

तात्पर्य—भगवान् भक्तों को अभय देने वाले हैं, वे सर्वत्र हैं, अतः तत्काल श्रीवसुदेवजी के मनमें सम्पूर्ण कलाओं से प्रकट हो गये। प्रभु के अपार तेज से युक्त श्रीवसुदेवजी भी

सूर्य के समान तेजस्वी होने से उन्हें देखते ही लोगों की दृष्टि चौंधिया जाती थी। भगवान के उस प्रकाशमय अंश को जो जगत में मंगलकारक है श्रीवसुदेवजी से श्रीदेवकी देवी ने विशुद्ध मन से सर्वात्मा भगवान को पूर्व दिशा स्थित चन्द्रदेव की तरह धारण किया।

यह निर्विवाद सत्य है कि ब्रह्म के गर्भ में आने से उसकी महत्ता में तनिक भी न्यूनता नहीं आती। स्वयं प्रमाणभूत वेदभगवान् की भी स्पष्ट घोषणा है कि ब्रह्म गर्भ में प्रवेश करता है। यथा-

"प्रजापतिश्चरति गर्भेऽन्तर्जायमानो, योबहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यंति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा।
(शुक्ल यजुर्वेद ३१-१९)

अर्थात् परमात्मा गर्भ में आता है। यद्यपि वह अन्तर्जायमान है फिर भी वह बहुत प्रकार से उत्पन्न होता है। उसके जन्म का कारण ज्ञानी लोग अच्छी तरह से जानते हैं। उसमें अनन्त ब्रह्माण्डों की स्थिति है।

अतः जिस प्रकार श्रीरामादि चारों भ्राता श्रीदशरथ एवं उनकी तीनों रानियों के संयोग से प्रकट हुए, उसी प्रकार श्रीरामवल्लभा श्रीसीताजी और अन्य तीनों बहनें श्रीसीरध्वज-कुशध्वज एवं उनकी रानियों के संयोग से ही प्रकट हुई। हाँ इतनी बात अवश्य है कि श्रीकिशोरीजी हल

प्रबर्हण काल में भूमि पर ही प्रकट हुई और अन्य तीनों बहनें श्रीमाण्डवी, श्रीउर्मिला तथा श्रीश्रुतकीर्तिजी राज-महल में प्रकट हुई थीं।

राजर्षि जनकजी की सगी सुता श्रीसीताजी हैं, इसी से महर्षि वाल्मीकि जी ने कई जगह स्पष्ट संकेत किया है-

'जनकस्य कुले जाता देवमायेव निर्मिता ।
सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधूः ॥"
(वा० रा० १।१।२७)

यहाँ 'जनकस्य कुले जाता' कहकर श्रीजानकीजी को जन्मी हुई जनकपुत्री सूचित किया है। अयोध्या काण्ड में भी श्रीकिशोरीजी के लिये 'महाकुलीना' कहा-

"सीते महाकुलीनासि धर्मे च निरता सदा।"
(वा० रा० २।२८।३)

स्वयं श्रीजनकनन्दिनी ने यतिवेष में स्थित रावण से अपना परिचय दिया है-

'दुहिता जनकस्याहं मैथिलस्य महात्मनः ।'
[वा० रा० ३।४७।३]

श्रीहनुमानजी महाराज श्रीसीताजी की खोजमें स्पष्ट जनकात्मजा कहते हैं-

"उपर्युपरि सा नूनं सागरं क्रमतस्तदा ।
विचेष्टमाना पतिता समुद्रे जनकात्मजा ॥"
[वा० रा० ५।१३।१०]

श्रीजनककिशोरी को न पाकर पवनकुमार एक जगह व्यथित हृदय से कहते हैं—

'विनष्टा वा प्रणष्टा वा मृता वा जनकात्मजा ।'

[वा० रा० ५।१३।१७]

केवल महर्षि वाल्मीकि जी ही नहीं श्रीकृष्ण द्वैपायन भगवान् वादरायण वेदव्यास जी भी महाभारत वन पर्व में श्रीसीताजी को श्रीजनकजी की आत्मजा मानते हुए लिखते हैं—

"विदेहराजो जनकः सीता तस्यात्मजा विभोः ।"

[म० व० २५८/९]

"सीता च भार्या भद्रं ते वैदेही जनकात्जा ।"

[महा० व० ३/२७६/२९].

"निहत्य समरे शत्रूनाहत्य जनकात्मजाम् ।"

[महा० व० ३/२८२/३५]

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में योगिराज जनकजी अपनी प्रिय पुत्री श्रीसीताजी की जन्मगाथा का संक्षिप्त-संकेत महर्षि विश्वामित्र जी से देतें हैं—

"क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता ।
भूतलादुत्थिता सा तु व्यवर्धत ममात्मजा ।।"

[वा०रा० १/६६/१४]

अर्थात्—भूमि—खेत (विशेष प्रकार की नववर्षारम्भ में विशिष्ट योग पर) शोधन (हल चलाकर बीज-बपन)

काल में मेरी औरस पुत्री श्रीसीता वहीं धरती पर उत्पन्न होकर सयानी हुई है।

स्मरणीय है यदि श्रीजनकजी की पुत्री जानकी जी स्वजात सुता नहीं होती तो महर्षि 'ममात्मजा' शब्द नहीं देते। यद्यपि अगले श्लोक में जनकजी ने श्रीकिशोरीजी को 'अयोनिजा' भी कहा है। यथा–

"वीर्य शुल्केति में कन्या स्थापितेयमयोनिजा।"

किन्तु तत्काल दूसरे चरण में पुनः कहते हैं—

भूतलादुत्थितां तां तु वर्धमानां ममात्मजाम्॥
(वा० सा० १।६६।१२)

इस श्लोक में 'अयोनिजा' 'भुतलादुत्थिताम्' दोनों शब्द आने का मात्र इतना ही अभिप्राय है कि जानकजी परम तत्वज्ञ हैं वे जानते हैं कि साक्षात् भुवन जननी-परम शक्ति ही मेरी पुत्री के रूप में प्रकट हुई हैं। नित्य दम्पति श्रीसीतारामजी समस्त संसार के माता पिता हैं साक्षात् चतुष्पाद् विभूति नायक श्रीसाकेताधीश भगवान श्रीराम की नित्य प्रिया श्रीसीता महारानी ने मुझे पिता और सुनैना को माता बनने का श्रेय दिया है। अतः लीला की दृष्टि से अपनी 'आत्मजा' और तत्वतः 'अयोनिजा' कहा।

यद्यपि राजर्षि जनकजी की तरह सुनैनाजी लोक-ख्यात् न होने के कारण श्रीकिशोरीजी की माता के रूप

में वर्णित नहीं हैं, सर्वत्र जनक पुत्री के नाम से ही ग्रन्थों में वर्णन मिलता है। फिर भी यदा-कदा भगवद् यश रस-रसिक सन्त जनों ने यत्र-तत्र सुनैनात्मजा, सुनैना सुता, सुनैना कुमारी आदि नामों से भी श्रीकिशोरीजी को सम्बोधित किया है। नीचे कुछ उद्धरण दिये जाते हैं—

श्रीजानकी जन्म बधाई प्रकरण, "श्रीसीताराम वर्षोत्सव" नामक ग्रन्थ विख्यात् है, उसमें सन्तप्रवर कृपानिवास जी एक पद्यमें स्पष्ट लिखते हैं कि जगज्जनी श्रीकिशोरीजी ने महारानी सुनैनाजी की बाम कुक्षि को कृतार्थ किया था। यथा—

"महिमा गाओरी हैली सुनैना भाग की।
उमही है री हैली बेलि सुहाग की ॥
उमही सुबेलि सुहाग की, बर बाम कोख सुहावनी।
अनुराग जलसों लागि पाली, सुरति मालिनि भावनी ॥"

(जानकी जन्म बधाई पद्य—१ से)

श्रीरसिक अलीजी के बधाई के पद्य तो अत्यन्त ललित हैं तथा सन्तों में गायन की परिपाटी भी है—

"बाजे बाजे बधाई आज, जनकपुर रङ्ग भरी।
रानी सुनैनाबेटी जाई, आजु सुदिन शुभयोग घरी॥"

(सीताराम वर्षोत्सव पद्य—२२

श्रीधाम-जनकपुर से से प्रकाशित 'मिथिला

भाव भूषण' नामक ग्रन्थ के सम्पादक पं० श्रीअवधकिशोर दासजी महाराज ने श्रीजनकराजलाड़लीशरणजी द्वारा लिखित पद्यों का सम्पादन किया है, उसमें एक जगह एक पद्य में स्पष्टतः 'सुलोचनात्मजा' श्रीसीताजी के लिए आया है। यथा—

"जय जनकराज कन्या सुघरि, सुलोचनात्मजा सही।
जयति जयति जयति जय, कमला कोमला जल वही॥"

(मिथिला भावभूषण पृष्ठ सं०-२९)

श्रीमिथिला धामानन्य रसिक सन्त श्यामसखी जी महाराज एक पद्य में लिखते हैं—

तजि न्यारो रह्यो ना जाय, मिथिला नगरिया।
जब-जब जन्म देहिंविधि मोकों,तब-तब यहि पुर आय।मि०
रानि सुनैना जु की बेटी लड़ेती, जूठन खैहों अघाय।मि०

श्रीअवध एवं वृन्दावन के सन्त प्रवर महाकवि जय-राम देवजी महाराज एक अत्यन्त ही सुन्दर ललित रसिया पद्य में स्वयं श्रीजनककिशोरीजू की उक्ति को लिखते हैं। यथा—

मेरी सुन्दर मिथिलापुरी सकल लोकन ते न्यारी है।

० ० ० ०

मेरे पिता जनक योगेश्वर, मुनिजान जिनहिं बनावत गुरुवर।
माता रानि सुनैना सुखकर, प्रेममूर्ति मम भ्रात मनोहर॥

रसिकों का अत्यन्त रसमय ग्रन्थ श्रीभुशुण्डी रामायण लोक ख्यात् है। उसमें स्पष्ट रूपेण श्रीजनककिशोरी को जनकात्मजा कहा गया है—

अस्माकं जनकात्मजा युवतिभिर्नर्मीकृता विष्टिता ।
विप्राणी गुरूरङ्गना शिवमलं, संश्रृन्वती सुस्मिता ।।
श्रीमन्मैथिलराज कौतुक गृहे, ग्रन्थीकृताधिष्टिता ।
सा भव्यं नितरां तनोतु सततं श्रीरामवामान्विता ।।

[श्रीमिथिला भावभूषण के परिशिष्ट से उद्धृत]

'श्रीसूरकिशोरजी' ने तो एक पद्य में लिखा है—

नमो नमो श्रीजानकलली, जन्मत भई विदेहनृपतिघर ।
कीरति त्रिभुवन छाई ।।

अनन्त श्रीविभूषित मानस तत्वान्वेषी, वेदान्त भूषण डॉ० पं० श्रीरामकुमार दासजी महाराज डी० लिट्० श्री गुरुदेव महाराज ने स्वरचित महाकाव्य 'श्रीजानकी कृपा पदावली' बालकाण्डान्तर्गत श्रीकिशोरीजी के प्राकटच प्रकरण में स्पष्ट वर्णन किया है। यथा—

कनकलता हरिदेव महाना ।
नैमिष जाइ महातप कीन्हें, हरिहि पुत्र करि पावौं ।
मनु-शतरूपा सोइ बर लीन्हें, लगो नही द्विज दावौं ।।
श्री हों पुत्रीवर नहि आना, कनकलता हरिदेव महाना ।।
राम गये जब एवमस्तु कहि ..व नृप स्वर्ग सिधाये ।

छठयें मनवन्तर मनु-कश्यप द्रोण-धरा द्विज जाये ॥
दशरथ जनक दुवौ जग जाना । कनकलता हरिदेव महाना ॥
पृथिवी को बराह दीन्हें सुत भौम असुर अंगारा ।
भू देविउ मन कन्या हों श्रीहरि जामात हमारा ॥
प्रविशि सुनैना तन सुख माना । कनकलता हरिदेव महाना ॥
समय महामति देवि सुनैना, गर्भहि धारण कीन्हीं ॥
वार्षिक उत्सव महं नृप रानी, मिलि महि दारण कीन्हीं ॥
तिहि क्षण प्रसवकाल नियराना, कनकलता हरिदेव महाना ।
रानि उदर ते कन्या प्रकटी, भूतलते जनु काढ़ी ।
रिषि मुनि देव विप्र द्युति, देखत प्रीति इष्ट सम बाढ़ी ॥
बाल्मीकि मुनि किये बखाना । कनकलता हरिदेव महाना ॥
जानत नृप मम औरस कन्या, रानि अंगजा जानै ।
जनकात्मजा सुनैना तनया, भूमि सुताहूँ मानै ॥
ब्रह्म 'कुमार' सुभेद बखाना । कनकलता हरिदेव महाना ॥

० ० ० ०

धन्य मही मिथिला भई ।
भू देवी श्रीजनक रानि महँ दिव्य अंश प्रविशानी ।
ताते साथ महामति के महि भई जनक की रानी ॥
दिव्य सुता हो आश लई । धन्य मही मिथिला भई ॥१॥
महि जोतत नृप जनक सुनैना रानि बीज महि डारी ।
पंचमचक्र समाप्त होत तिय तिहि क्षण प्रसव विचारी ॥

बइठि भूमि पर रानि गई । धन्य मही-मिथिला भई ।।२।।
इंगित पाइ वस्त्र-तम्बू तहँ तानि उठेउ पल माहीं ।
लांगल सीर माहिं कन्या च्युति रानि उदर पचि जाहीं ।।
रोदन सुता सजेर ठई । धन्य मही मिथिला भई ।।३।।
द्विज तिय सखी दासिगन सब मिलि बैठि रानि पहँ जाहीं ।
तबहिं नाल काटन हित दाई आइ गई पल माहीं ।।
प्रथमहिं नृप बहु दान दई। धन्य मही-मिथिला भई ।।४।।
सोइ वस्त्र गृह भयो सूतिका सदन नृपति सब ठाट ठये ।
मणिन जटित तम्बुन पुर शोभित यह छबि लखि विधि-
चकित भये ।।
पुरि सीतामहि नाम लई । धन्य मही-मिथिला भई ।।५।।
पूजित क्षेत्र माहिं मिथिलेश्वरि जो कन्या शुचि जन्म दई ।
ताते महिजा सुता कहावति जनकात्मजा सुनाम ठई ।।
ब्रह्म 'कुमार' हुं शरण लई । धन्य मही मिथिला भई।।६।।

० ० ० ०

हुई मिथिलेश की लाली बधाई है-बधाई है ।
नींव गढ़ लंक की हाली बधाई है—बधाई है ।।
गुनी गन्धर्व जुरि आये जनक की कीर्ति जश गाये ।
हुए सबही के मन भाये है बधाई है—बधाई है ।।
हुई मिथिलेश की लाली बधाई है—बधाई है ।।१।।
सकल सुरलोक की नारी नचैं मन मगन हो भारी ।

परस्पर देत शुभ गारी, बधाई है–बधाई है ॥
हुई मिथिलेश की लाली बधाई है–बधाई है ॥२॥
बजाते देवगन बाजा मुनिन मिलि आरती साजा ।
लुटाते द्रब्य महराजा, बधाई है–बधाई है ॥
हुई मिथिलेश की लाली बधाई है–बधाई है ॥३॥
हर्ष सब लोक उमड़ाया, खलों में शोक घन छाया ।
हुआ सुर मुनि का मनभाया, बधाई है–बधाई है ॥
हुई मिथिलेश की लाली बधाई है–बधाई है ॥४॥
सुजश सुर नाग मुनि गाते दान मनभावते पाते ।
'कुमार' हु गाय हर्षाते बधाई है–बधाई है ॥
हुई मिथिलेश की लाली बधाई है–बधाई है ॥५॥

(श्रीजानकी कृपा पदावली बालकाण्ड)

इन पद्यों के अवलोकन से स्पष्ट है श्रीजनकनन्दिनी जानकी, माता सुनैना देवी एवं श्रीविदेहराज सीरध्वज की औरस कन्या थी।

आइये अब कुछ प्रचलित धारणा के सम्बन्ध में विचार करलें। श्रीरामवल्लभा, जगज्जननी जी के जन्म सम्बन्ध में स्पष्ट रूपेण पूर्णत: वर्णन का आर्ष ग्रन्थों में अभाव के फलस्वरूप कई प्रकार से कल्पना प्रसूत कहानियों का सृजन हुआ है। समग्र धर्मप्राण आस्तिक जनता के हृदयमें अनादि काल से मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीसीतारामजी के प्रति

समर्पण भावना युक्त ममता की कड़ियाँ जुड़ी हुई प्रतिष्ठित हैं। यह देखकर कुछ धर्म द्रोहियों के हृदय में कसक पैदा होने के कारण हमारे प्राणाराध्य इष्टदेव भगवान् श्रीसीता-रामजी के परम पावन चरित्र परक धर्म ग्रन्थों में मनमानी मिलावट करने का प्रारम्भीकरण हुआ। उन वेदविरोधक विधर्मियों का यही कुप्रयास रहा कि किसी प्रकार श्रुति सेतु संरक्षक श्रीसीतारामजी जनमानस पटल से सर्वथा पृथक हो जायं।

इसके लिये कई ढंग से श्रीरामचरित को विकृत करने का प्रयास किया गया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१– जनकात्मजा श्रीसीताजी को रक्तजा रावणात्मजा और दशरथात्मजा तक भी लिखा गया है।

२– कहीं जनक एवं मेनका की मानसिक पुत्री बताया गया है।

३– कहीं मंदोदरी के पेट से पैदा होना बताया गया है।

४– कहीं कमल पुष्प से प्रकट होना कहा गया है।

५– कहीं ऋषियों मुनियों के रक्त से भरे घड़े से जन्म लेना लिखा गया है।

६– कहीं अग्नि ज्वाला से उत्पन्न लिख दिया गया है।

७– कहीं वृक्ष से उत्पन्न तो कहीं फल से प्रकट कराया गया है।

८– इतना ही नहीं दशरथ जातकम् में तो दशरथ जी की पुत्री तक लिख दिया गया है । और आगे चलकर दोनों भाई बहन का आपस में विबाह भी कराया गया है

९– कहीं कहीं वेदवती को ब्रह्म स्वरूपा श्री किशोरीजी का उत्स मान लिया गया है ।

१०– डा० नरेन्द्र कोहली ने तो अज्ञात-कुलशीला लिखा है ।

इस प्रकार श्री किशोरी जी के सम्बन्ध में बहुत विवाद है। भिन्न भिन्न ग्रन्थों में विभिन्नता देखकर इसपर हमें गहराई से तात्विक बिचार करना चाहिये । और श्री किशोरी जी को सुनैना एवं श्री जनक जी की बेटी ही स्वीकार करना चाहिये । इसमें कई सन्तों का भी प्रमाण स्थित है । साथ ही दूषित भाव भी नहीं है ।

अस्तु पाठक वृन्द यदि इससे सन्तुष्ट होंगे तो मैं अपना श्रम सफल समझूँगा । अनेकाअनेक कल्पनाजन्य गाथायें फैली रहें तो भी उससे हमारी प्राचीनतम संस्कृति पर तब तक कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता जब तक हमारे प्राणों के भी प्राण जिनसे हमारा सनातन सम्बन्ध है, उन प्रभु श्रीसीताराम जी के श्रीचरणों से हम जुड़े हैं । अन्त में 'उद्‌भव स्थिति संहार कारिणम्' जगज्जननी श्रीजानकीजी की मंगलमयी आरती गान प्रस्तुत करते है । यह अत्यन्त रसमयी ललित पद्यावली है श्री जनकपुरधाम स्थित सन्तप्रवर श्री अवधकिशोर दासजी प्रेमनिधि महाराज के अनुरोध से

श्रीमहाराजजी ने श्रीरामानन्द आश्रम में श्रीदुलहा सरकार के सामने इस मंजुल मंगलमयी गीत की रचना की थी—

आरति श्री मिथिलेश लली की।

भूमि-तिलक सम तिरहुत शोभित,
जनक नगर लखि बिधि मन लोभित।
मणिमय भूमि लखे सुर चकित,
सीता दिव्य बिहार थली की ॥आ०।

श्रीमिथिला शुचि दिव्य सरोबर,।
ज्ञान भक्ति जल भरित बरोबर।
मातु सुनैना कमल कन्दते,
प्रकटी पंकज कनक कली की ॥आ०॥

कोऊ शिर पर चँबर ढुराबै,
कोऊ मोरछल शीश फिरावैं।
सखिगन बीन सुतान मिलित तहँ.
शोभित पंचम राग भली की ॥

दूलह राम सीय दुलहीं संग,
राजत परम उमंग भरे अंग।
पान खात दम्पति मुसुकावत,
सेवा स्वीकारत महली की ॥आ०।

दासी दास बजावत बाजा दरस चहत बहु रानी राजा।
'रामकुमारदास' नित चाहत,धूरि सीय पदत्राण तली की ॥
आरति श्री मिथिलेश लली की।

देबि, अति दुर्लभहिं दरस पायो ॥

जयति श्री स्वामिनी सीय शुभनामिनी-
दामिनी कोटि निज देह दरसैं ।
इन्दिरा आदि दै मत्त-गजगामिनी,
देब-भामिनि सबै पांव परसैं ॥
दुखित लखि भक्त बिन दरस निज रूप-
जप यजन तप यतन ते सुलभ नाहीं ।
कृपा करि पूर्ण नवकंज-दल-लोचना प्रगट-
भइ जनकनृप-अजिर माहीं ॥
रमित तव विपिन प्रियप्रेम प्रगटन-करन,
लंकपति व्याज कछु खेल ठान्यो ।
गोपिका कृष्ण तव तुल्य बहु यतन करि-
तोहिं मिलि ईश आनंद मान्यो ॥
हीन तव सुमुख के संग रहि रंक सो,
बिमुख सो देव नहिं नाह नेरो ।
अधम उद्धरनि यह जानि गहि सरन तव-
दास तुलसी भयो आय चेरो ॥४१॥

अनंत श्रीविभूषित मानसतत्वान्वेषी डाँ पं० श्री रामकुमार दासजी महाराज रामायणी द्वारा लिखित प्राप्त तथा अन्य प्रकाशित प्राप्य पुस्तकें

१- मानस शंका समाधान (बाल काण्ड) ६)
२- मानस शंका समाधान (अयोध्या काण्ड) ६)
३- मानस शंका समाधान (अरण्य-किष्किधा) (८
४- मानस शंका समाधान (सुन्दर-लंका-उत्तर) २०)
५- सत्योपाख्यान [हिन्दी-अनुवाद) ४)
६- मनोहरचार(मानस के मार्मिक प्रसंग) २)
७- भक्ति का शृङ्गार ,, १)५०
८- धन्य जटायु(खण्ड काव्य) ३)
९- जयी जटायु मानस के मार्मिक प्रसंग) ४)
१०- प्रेममयी मुद्रिका ,, २)
११- श्रीराम परत्व-भागवत में १)५०
१२- पुष्प वृष्टि-मानस में २)
१३- वर की खोज (सीता स्वयंब[र] १)५[०]
१४- पहुनाई-शबरी कथा १)२[५]
१५- मानस के सपेरे विचित्र प्रसंग १)२५
१६- अनिंदिता- श्रीजनक नन्दिनी द्वि० सं० १)५०
१७- श्रीरामचरित के तीन क्षेपक १)५०
१८- मानस में नारी निन्दा-नारी दीक्षा १)
१९- मानस में दो दान (मानस के प्रसग १)
२२- तुलसी कृति का पाठ कैसा हो? [एक शोध निबन्ध] ५०)
२१-मानस चतुश्शती १०८पद्यावली)२५
२२- श्रीमणिपर्वत का इतिहास १)५०
२३- वेदों में कृष्ण कथा २०)

—: अन्य प्रकाशन :—

१- जय श्रीराम जन्मभूमि [पद्यात्मक-गेय १)
२-युगलचालीसा तुलसी-रामानंद)६०
३-भजन लहरी ४ खण्डों में २)५०
४-वेदान्त भाषाभाष्य विशिष्टाद्वैत ३)
५-श्रीरामानन्दाचार्यजी और आजकी समस्यायें २)
६-श्री सीताजनकात्मजा १)५०

पुस्तकें मँगाने का पता:मानस मर्मज्ञ पं०श्रीसच्चिदानन्ददास रामायणी
श्रीराम ग्रन्थागार, मणिपर्वत, श्रीअयोध्याजी पि०-२२४१२३